नियमसार, गाथा ९१।

मिच्छादंसणणाणचरित्तं चइऊण णिरवसेसेण।
सम्मत्तणाणचरणं जो भावइ सो पडिक्कमणं।।९१।।

जो जीव त्यागे सर्व मिथ्यादर्श-ज्ञान-चरित्र रे।
सम्यक्त्व-ज्ञान-चरित्र भावे प्रतिक्रमण कहते उसे॥९१॥

टीका : यहाँ (इस गाथा में) सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का निरवशेष (-सम्पूर्ण) स्वीकार करने से... प्रतिक्रमण है न? निश्चयप्रतिक्रमण। आहाहा! तीनों इकट्ठे लिये हैं न? दर्शन, ज्ञान और चारित्र। तीनों निरविशेष। पूर्ण परमात्म कारण प्रभु की श्रद्धा, उसका ज्ञान और उसमें रमणता। यह पूर्ण **स्वीकार करने से... (-सम्पूर्ण) स्वीकार करने से...** ऐसा है न? आहाहा!

अब यहाँ पच्चीस-पच्चीस लाख की मोटरें, पचास-पचास लाख की मोटर में बैठकर लहर करता हो। अब उसे मरकर नरक में जाना... आहाहा! गजब बात, प्रभु! चक्रवर्ती को तो रिद्धि इससे बहुत होती है परन्तु वह सम्यग्दृष्टि है। यह तो क्षण में और पल में परभाव का अभिमान, विशेषता, अधिकता, हृदय में परसम्बन्धी अहंकार भासित ही

हुआ करता है। स्वचैतन्यमूर्ति परमस्वभावभाव की तो खबर भी नहीं। उसके अतिरिक्त जितने परभाव हैं, उनकी अधिकता, विशेषता, अचिन्त्यता, विस्मयता में रुका हुआ है। आहाहा! गजब कहते हैं। यह पचास लाख की मोटर में बैठनेवाले मरकर नरक में जाए... अर..र..! गजब बात! ....आहाहा! एक तो माने कौन? इसे उसका अभिमान तो कितना होगा! सम्यग्दर्शन के अतिरिक्त की बात है न? चक्रवर्ती की धर्मी की अलग बात है। आहाहा! बाहर की यह रिद्धि देखे... आहाहा! बीस लाख की मोटर में तो बैठकर आया था। वह मुम्बई छोड़ने आया था न, पूनमचन्द। वह बीस लाख की मोटर। जिन्दगी में पहली-पहली देखी। वह तो कहता था कि हम रहते हैं, वहाँ तो पचास-पचास लाख की मोटर है। आहाहा! उसकी इसे विशेषता, अधिकता, महिमा (लगती है)। प्रभु! अन्दर आत्मा महाप्रभु है। पहले यह बात ली है न!

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का निरवशेष (-सम्पूर्ण) स्वीकार... आहाहा! मैं परमात्मस्वरूप हूँ-ऐसा सम्पूर्ण श्रद्धा में स्वीकार, ज्ञान में सम्पूर्ण स्वीकार और चारित्र में सम्पूर्ण रमणता। आहाहा! उत्कृष्ट बात ली है न? तब इसे प्रतिक्रमण निश्चय कहा जाता है। आहाहा! **सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का निरवशेष...** है न? पाठ में ऐसा है न? **णिरवसेसेण।** ऐसा है न पाठ? कुछ बाकी रखे बिना। ओहोहो! एक समय में प्रभु! अनन्त... अनन्त... अनन्त गुण... कारण लेंगे। टीका में कारणपरमात्मा लेंगे। कारणपरमात्मा... आहाहा! वह मोक्ष की पर्याय का कारण है। उसका कारण भले मोक्ष का मार्ग है परन्तु मोक्ष के मार्ग का कारण है, वह कारणपरमात्मा है। आहाहा! कठिन बातें हैं। यह तो जिन्हें संसार का डर है, भवभ्रमण (का डर है, उसके लिए बात है)। देह छूटेगी, तब कहाँ जाएगा? भाई! तू तो नित्य है, शाश्वत् है, तेरा तत्त्व अविचल है। वह पड़कर कहीं मिल जाए, ऐसा वह तत्त्व नहीं है। आहाहा!

अविचल नित्य कारणपरमात्मा का पूर्ण स्वीकार-सम्पूर्ण स्वीकार। आहाहा! दर्शन में सम्पूर्ण स्वीकार, ज्ञान में सम्पूर्ण स्वीकार, रमणता में सम्पूर्ण रमणता। इन तीन का **स्वीकार करने से और मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र का निरवशेष त्याग करने से...** यहाँ निरवशेष लिया है। है न? पाठ में निरवशेष है, इसलिए सबमें लागू करते हैं। आहाहा!

आंशिक भी मिथ्यात्व, अज्ञान और राग न रहे। अकेला सम्यग्दर्शन, उसका विषय

स्वीकार परमात्मा पूर्ण स्वरूप तत्त्व है न ? तत्त्व है तो वह पूर्ण स्वरूप है। वह कारणपरमात्मा है, परन्तु कारणपरमात्मा है, वह कब हो ? वह तो है। कारणपरमात्मा तो सबको है, परन्तु उस कारणपरमात्मा का स्वीकार हो, तब कारणपरमात्मा उसके लिए होगा। आहाहा! है न ?

यह प्रश्न हुआ था न ? वीरजीभाई के लड़के त्रिभुवनभाई ने प्रश्न किया था कि यह कारणपरमात्मा कहते हो और कार्य नहीं आवे तो वह कारण किसका ? बात सच्ची, परन्तु कारणपरमात्मा का अस्तित्व जितना और जैसा है, उतना प्रतीति और ज्ञान में न आवे, उसके लिए कहाँ है ? समझ में आया ? होने पर भी उसकी नजर में न आवे, तब तक उसे नहीं है। आहाहा!

भगवान अन्दर परमात्मा स्वयं परमेश्वर, जिसे अभी कारणपरमात्मा कहेंगे, वह कारणपरमात्मा है। सिद्ध हैं, वे कार्यपरमात्मा हैं। सिद्ध हैं, अरिहन्त हैं, वे पर्याय में (कार्यपरमात्मा हैं), कार्य है न ? पर्याय, वह कार्य है। पर्याय कार्य अर्थात् कार्यपरमात्मा है और यह वस्तु है वह कारणपरमात्मा है। आहाहा! समझ में आया ? आहाहा! अब ऐसे बाहर से करोड़ों रुपये, अरबों रुपये, लाखों, दस-दस, बीस-बीस लाख खर्च करे, उत्साह-हर्ष का पार न हो। अरे रे! उसमें क्या होता है ? प्रभु! उसमें क्या हानि होती है, उसकी इसे खबर नहीं है। आहाहा!

जिसमें उत्साह करनी है, वह तो कारणपरमात्मा में (करना है)। उत्साह करना अर्थात् स्वीकार करो। स्वीकार कहा न ? आहाहा! स्वीकार कब होगा ? इसके ज्ञान में उसकी महिमा ख्याल में आवे कि यह वस्तु है, परिपूर्ण है, ध्रुव है, अनन्त-अनन्त गुण से परिपूर्ण भरपूर भण्डार है। एकरूप है, चलनरहित-परिणमनरहित वह चीज़ है। परिणमती है तो पर्याय। ऐसी परिणमनरहित एक चीज़ यह वस्तु है, ऐसा इसे अन्दर विश्वास प्रतीति में आवे, तब इसे स्वीकार करे, तब इसे कारणपरमात्मा हुआ। दूसरे को है, तथापि नहीं है। आहाहा! है, तो भी माना नहीं तो उसे तो नहीं है। है, तो भी माना है कि मैं तो रागी हूँ, एक समय की पर्यायवाला हूँ, दयावाला हूँ, दानवाला हूँ, पुण्यवाला हूँ, पापवाला हूँ, सेठाई है, मूर्खाई है, पण्डिताई है... आहाहा! अब इतना माना, उसने यह कहाँ माना ? आहाहा! वह तो सब पर्याय के भेद हैं। भगवान पूर्णानन्द में तो पण्डिताई नहीं। वह तो पूर्णानन्दस्वरूप है। आहाहा!

पूर्ण स्वरूप अनन्त-अनन्त गुण से भरपूर महाभण्डार है। उसके अतिरिक्त कोई उत्कृष्ट चीज़ नहीं है। ऐसा अन्तर में ज्ञान-दर्शन में स्वीकार हो और तदुपरान्त फिर उसमें रमणता हो, उसका नाम यहाँ प्रतिक्रमण कहने में आता है। आहाहा! अब ऐसी व्याख्या। कितने प्रतिक्रमण किये होंगे? आसन फाड़े होंगे या नहीं? चिमनभाई! आहाहा! अरे! भाई!

दो शब्द लिए हैं न? मिथ्यादर्शन और सम्यग्दर्शन। विमुख होना और है, उसमें आना, ऐसा। विमुख होना। मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र से विमुख होना और है, उसमें आना; है, उसमें आना, तब सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र के स्वीकार में यह आवे। स्वीकार करे, तब उसमें आया कहलाये। आहाहा! वह भी **(-सम्पूर्ण) स्वीकार...** ऐसा शब्द है न? निरवशेष है न? निः अवशेष - निः अवशेष - कुछ भी बाकी रखे बिना। उसे अपूर्ण या विपरीतता या अधूराश या कोई खामी / त्रुटि कुछ भी उसमें डाले बिना, अकेला परमात्मा पूर्णानन्द का नाथ अतीन्द्रिय आनन्द का सागर, ऐसे अनन्त गुण सम्पूर्ण, ऐसा निरवशेष सम्पूर्ण स्वीकार करने से... आहाहा! यह अस्ति ली है।

मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र का निरवशेष त्याग करने से... नास्ति ली है। एक भी अंश, कुछ भी राग का अंश भी लाभदायक (मानना), अन्यमति के अनेक प्रपंच-३६३ पाखण्ड का कोई भी धर्म का अंश ठीक है, यह सब मिथ्यात्व है। आहाहा! उसकी प्रशंसा, उसका स्तवन, उसकी स्तुति, कुछ ठीक लगे तो उसकी स्तुति हो। वह सब मिथ्यादर्शन है। आहाहा! वीतरागमार्ग के सिवाय जितने अन्यमत ३६३ पाखण्ड मार्ग हैं, उन सबका **निरवशेष त्याग करने से...** कुछ भी बाकी रखे बिना। थोड़ा तो इसका रखो। दूसरे में है ही नहीं। यह वस्तु ऐसी सर्वज्ञ ने कही हुई और ऐसी है। कही तो है ऐसी जानकर कही है न? जैसी है, परिपूर्ण परमात्मा, ऐसी ही भगवान ने जानी, ऐसा भगवान ने कहा। आहाहा!

अमृत के सागर भगवान का अन्दर में पूर्ण स्वीकार हो और मिथ्यादर्शन आदि का निरवशेषरूप से त्याग हो। इसका स्वीकार हो, उसका त्याग हो। आहाहा! इसका ज्ञान न हो, ऐसी समझ न हो, वह त्याग और स्वीकार कहाँ से करे? आहाहा! धन्धे के कारण निवृत्ति भी नहीं मिलती। आहाहा! धन्धा तो यह करना है। अनन्त काल में मुश्किल से यह समय मिला है। आहाहा! सब छोड़कर करने जैसा यह एक है। यह सवेरे आया था न? करने जैसा किया सब। यह करने जैसा यह किया, वह सब किया। आहाहा!

भगवान आत्मा परिपूर्ण है। पर्याय में अव्यक्त है, अप्रगट है, उसे पर्याय में-प्रगट पर्याय में पूरा प्रगट स्वीकार करना। आहाहा! समझ में आया? (समयसार) ४९ (गाथा के) छह बोल। व्यक्त से अव्यक्त भिन्न है। व्यक्त अर्थात् पर्याय से द्रव्य भिन्न है। छह बोल है न? भाई! व्यक्त और अव्यक्त का एक साथ में ज्ञान होने पर भी, व्यक्त से वह प्रभु अव्यक्त भिन्न है। आहाहा! एक समय की पर्याय में पूरा द्रव्य ज्ञात हो, तथापि उस पर्याय से द्रव्य तो भिन्न है। आहाहा! यह बात! छह बोल में है न? व्यक्त और अव्यक्त एक साथ; व्यक्त अर्थात् पर्याय, अव्यक्त अर्थात् द्रव्य, एक समय में दोनों ज्ञात होने पर भी, व्यक्त के प्रति उदास है। व्यक्त को स्पर्श नहीं करता। द्रव्य, व्यक्त को स्पर्श नहीं करता। आहाहा! पर्याय में पूरे द्रव्य का स्वीकार हुआ, श्रद्धा-ज्ञान में पूरा स्वीकार हुआ, रमणता में भी पूरे स्वरूप में रमणता हुई, तथापि उस पर्याय को द्रव्य छूता नहीं। आहाहा! अब ऐसी बातें। व्यक्त-अव्यक्त एक साथ दोनों ज्ञान में आवें। ज्ञान में दोनों आवें तो भी अव्यक्त है, वह व्यक्त को स्पर्श नहीं करता। ऐसे व्यक्त, अव्यक्त को स्पर्श नहीं करता। आहाहा! अर्थात्? द्रव्य वस्तु है, वह पर्याय के अंश को स्पर्श नहीं करती। पर्याय का अंश जो है, वह त्रिकाली महाप्रभु कारणपरमात्मा को स्पर्श नहीं करता। जानता है, मानता है। आहाहा! ऐसी चीज़ है।

निरवशेष त्याग करने से परम मुमुक्षु को... वापस परम मुमुक्षु (अर्थात्) मात्र मोक्ष का कामी है। एक मोक्ष की ही पर्याय प्राप्त करनी है। दूसरा कुछ चाहिए नहीं। ऐसे **परम मुमुक्षु को निश्चयप्रतिक्रमण होता है...** उसे सच्चा प्रतिक्रमण होता है। आहाहा! व्यवहार से निश्चय होवे और इससे यह हो, इससे यह हो... बहुत कठिन काम। व्यवहार सुधारे बिना निश्चय आवे? पहले व्यवहार सुधारना चाहिए। भाई! यहाँ तो पहले-पश्चात् कुछ नहीं है। आहाहा! पहले यह भगवान और अन्तिम यह भगवान और मध्य में यह भगवान है। आहाहा! समझ में आये, उतना समझना, बापू! यह तो परमात्मा का घर है। आहाहा! अन्तर की चीज़ परमात्मस्वरूप है, उसका पूर्ण स्वीकार करने से और उससे विरुद्ध जितने अंश हैं, ३६३ पाखण्ड आदि चाहे जो (हों), आहाहा! उनका सर्वदा **त्याग करने से परम मुमुक्षु को निश्चयप्रतिक्रमण होता है, ऐसा कहा है।** ऐसा भगवान ने कहा है। आहाहा! कोई ऐसा कहे कि यह तो आचार्य ने ऐसा कहा है, अमुक ने ऐसा कहा है। भगवान ने ऐसा कहा है। आहाहा!

भगवान अर्हत् परमेश्वर के मार्ग से प्रतिकूल... भगवान सर्वज्ञ परमेश्वर वीतराग

परमात्मा, ऐसे महिमावन्त **भगवान अर्हत् परमेश्वर के मार्ग से...** उनके कहे हुए मार्ग से **प्रतिकूल मार्गाभास...** भगवान त्रिलोकनाथ परमात्मा ने कहा हुआ मार्ग, उससे अंश भी फेरफार (होवे), वह मार्गाभास है। मार्ग जैसा दिखता है, मार्ग नहीं है। आहाहा! कठिन काम है, बापू!

'नग्गो मोक्खो भणियो, सेसा ऊमग्गा' ऐसा पाठ है। कुन्दकुन्दाचार्य को-नग्न मुनि को जगत की कहाँ पड़ी है कि लोग क्या मानेंगे। उस समय श्वेताम्बर मत निकला था। जब कुन्दकुन्दाचार्य हुए, तब श्वेताम्बर मत निकला था। (उन्होंने तो) यह लिखा, कहा। नागा बादशाह जो बाहर और अन्दर, वह मोक्षमार्ग है। उसके अतिरिक्त सब उन्मार्ग है, जैनमार्ग नहीं। आहाहा! कठिन पड़े। वह सबको कैसा अच्छा लगता है कि सब धर्म अच्छे, ऐसा है, एक है, ऐसा है, वैसा है। सबको मीठा लगे। आहाहा! वाड़ा में भी धर्म है, धर्म नहीं - ऐसा नहीं है। आहाहा! यहाँ तो सूक्ष्म बात है। आहाहा!

दिगम्बर सन्तों ने, जो सर्वज्ञ भगवान ने कहा, वह कहा है। उससे एक अंश भी कहीं फेरफार होवे तो सब मार्गाभास है, मार्ग नहीं। दुनिया माने, न माने; दुनिया में आदर हो, न हो; दुनिया तिरस्कार करे कि यह एकान्त है। लोगों को संगठित कराना चाहिए, एकता करानी चाहिए। परन्तु किसकी एकता? भाई! किसके साथ एकता? वे सब भगवान हैं। वे भगवान हैं, इस प्रकार से एकता है, परन्तु पर्याय में मार्गाभास, उस मार्ग का श्रद्धान वह मिथ्यादर्शन है। आहाहा! वीतराग सर्वज्ञ ने कहे हुए मार्ग के अतिरिक्त, सब मार्ग है, वह उन्मार्ग है। आहाहा! यह तो अब खुली बात कही जाती है। कुन्दकुन्दाचार्य ने अष्टपाहुड़ में कहा है। 'नग्गो मोक्खो भणियो, सेसा ऊमग्गो' वह सब मार्ग उन्मार्ग हैं। मात्र नग्न नहीं; ऐसा नग्नपना तो अनन्त बार लिया है। अन्दर निर्विकल्प परमात्मा को स्वीकार करके, आत्मा को अन्दर रूखा-सूखा करके, जिससे विकल्प की भी वृत्ति नहीं, ऐसा नग्न भगवान अन्दर परमात्मा का स्वीकार करके और बाहर में नग्न हो, उसे बाहर में नग्नपना होता है। ऐसे मुनि को बाहर में नग्नपना ही होता है। अन्दर में मुनिपना प्रगट हुआ हो और बाहर में वस्त्र-पात्र हो, ऐसा नहीं हो सकता। समझ में आया? आहाहा! ऐसा है। आचार्य तो स्पष्ट रखते हैं।

भगवान अर्हत् परमेश्वर के मार्ग से प्रतिकूल मार्गाभास में मार्ग का श्रद्धान

वह... भी मार्ग है, वह भी धीरे-धीरे रास्ते धीरे-धीरे जाया जाता है। यह उतावल से जाए, यहाँ धीरे-धीरे जाया जाता है। ऐसा जो **श्रद्धान, वह मिथ्यादर्शन है,...** आहाहा! लोगों को ऐसा कठिन लगता है। अभी इन्दौर में एकता करावे, सबको एकता... समन्वय। अन्य धर्मियों और जैनधर्मी, महिमा की है न? बहुत महिमा की है। सब... आहाहा! समन्वय कराया, ऐसा कराया। क्या हो? प्रभु! क्या हो? आहाहा! मार्ग को-सत् को संख्या की कोई आवश्यकता नहीं है। कोई अधिक माने तो सच्चा मार्ग है और थोड़े माने (तो मिथ्या), ऐसा कुछ है नहीं। सत् तो सत् ही है, उसे एक माने या करोड़ माने। आहाहा! वह सत्स्वरूप, उससे विरुद्ध जो है, उसे मिथ्यादर्शन है।

उसी में कही हुई अवस्तु में वस्तुबुद्धि... मार्गाभास। सर्वज्ञ वीतराग परमेश्वर के अतिरिक्त जो मार्गाभास हैं, उनमें **अवस्तु में वस्तुबुद्धि वह मिथ्याज्ञान है...** वस्तु नहीं है, उसे वह वस्तु मानता है। राग में धर्म नहीं है, उसे धर्म मानता है। द्रव्य परिपूर्ण है, उसे नहीं मानता। आहाहा! अरे! वास्तव में तो आत्मा के प्रदेश असंख्य हैं, वे पूरे नहीं मानते। यह अन्तर है। आहाहा! यह ३४३ राजु लोक है, उसके जितने प्रदेश हैं, वे प्रदेश मिलते नहीं, उनके हिसाब से। इतने तो प्रदेश जीव के हैं, एक जीव के भी मिलते नहीं। आहाहा! मार्ग फेर है, प्रदेश फेर है, सब अन्तर है। कठिन काम, भाई! भले थोड़े हों (परन्तु) मार्ग तो यह है।

अवस्तु में वस्तुबुद्धि, वह मिथ्याज्ञान... आहाहा! वस्तु नहीं है और कल्पना से सब किया है। कल्पना से खड़ा किया है। यहाँ तो सर्वज्ञ परमेश्वर त्रिलोकनाथ ने देखकर कहा है। वह तो वस्तु को वस्तुरूप से कहा है। आहाहा! और नहीं देखकर कहनेवाले, देखा नहीं, जाना नहीं, सर्वज्ञपना है नहीं और कल्पना से वस्तु को अवस्तु सिद्ध करे और अवस्तु को वस्तु सिद्ध करे—ऐसा जो ज्ञान, वह मिथ्याज्ञान है।

और उस मार्ग का आचरण, वह मिथ्याचारित्र है... आहाहा! उस मार्ग की श्रद्धासहित उसमें आचरण करना-व्रत, तप, भक्ति, वह सब अनाचरण-मिथ्याचारित्र है। ऐसा है। गले उतरना कठिन पड़े। एक तो परमात्मा एक समय में पूर्ण... आहाहा! असंख्यप्रदेशी सर्वज्ञ के अतिरिक्त यह किसी ने कहा ही नहीं। श्वेताम्बर की शैली में असंख्यप्रदेशी जो है, वह मिलता नहीं। आहाहा! एक अंश का भी अन्तर, (वह) मार्गाभास है। सर्वज्ञ परमात्मा ने देखा, जाना; उससे विरुद्ध जो कुछ अंश हो, उसका ज्ञान,

अवस्तु को वस्तु (जाने, वह) मिथ्याज्ञान और उसमें आचरण —व्रत पाले, महाव्रत पाले, त्याग करे, वह सब मिथ्याचारित्र है। आहाहा! ऐसा है। तो एक यही मार्ग सच्चा? सब मिथ्या? वीतरागमार्ग एक ही सच्चा, बाकी सब मिथ्या। किसी ने कुछ कम, किसी ने अधिक, किसी ने विपरीत कुछ का कुछ करके अनेक प्रकार की बातें की हैं। आहाहा! उन्हें मानना और उसमें आचरण (होना), वह मिथ्याचारित्र है। **इन तीनों को निरवशेषरूप से छोड़कर।** देखा? **तीनों को निरवशेषरूप से छोड़कर।** आहाहा! कुछ भी अंश बाकी रखे बिना। कहीं थोड़ा तो रखूँ, थोड़ा तो रखूँ। आहाहा! ऐसा कठिन।

त्रिकाल-निरावरण,... अब किसका स्वीकार करना? किसका अनुभव करना? आहाहा! त्रिकाल निरावरण परमात्मद्रव्य जो है। द्रव्य तो त्रिकाल निरावरण है। यह तो पर्याय में आवरण का निमित्त है। द्रव्य को आवरण-फावरण है नहीं। द्रव्य को आवरण होवे तो अद्रव्य हो जाए। वस्तु है, उसे आवरण होवे तो अवस्तु हो जाए। पर्याय को आवरण है तो पर्याय में अन्तर पड़ता है। आहाहा! वस्तु जो है, भगवान आत्मा द्रव्यस्वभाव (है) वह तो त्रिकाल निरावरण है। उसे कभी आवरण हुआ ही नहीं। पर्याय में, एक समय की पर्याय में राग के आवरण का निमित्त है और एक समय की पर्याय के आवरण को छोड़ना है। बाकी द्रव्य में छोड़ना और त्यागना कुछ है नहीं। आहाहा! कितने ही लोगों को कठिन लगता है। मार्ग ऐसा है, भाई! आहाहा!

त्रिकाल-निरावरण, नित्य आनन्द जिसका एक लक्षण है... नित्य आनन्द जिसका एक लक्षण। नित्य आनन्द; दुःख जरा भी नहीं। दुःख तो पर्याय में एक समय की अवस्था में है। द्रव्य में जरा भी दुःख नहीं है। आहाहा! वस्तु जो तत्त्व है भगवान चैतन्यस्वरूप द्रव्यस्वभाव। **त्रिकाल-निरावरण, नित्य आनन्द जिसका एक लक्षण है...** नित्य आनन्द जिसका लक्षण, आनन्द जिसका लक्षण। दुःख, राग-द्वेष, वह तो पर्याय की विकृत अवस्था है। वस्तु में कुछ है नहीं। वस्तु तो **नित्य आनन्द जिसका एक लक्षण...** जिसका एक लक्षण। थोड़ा आनन्द और थोड़ा दुःख और पर्याय में दुःख है, इसलिए थोड़ा दुःख द्रव्य में गिना जाए... क्या कहा यह? पर्याय में दुःख है, इसलिए द्रव्य में वह दुःख गिना जाए, आनन्द गिना जाए, आनन्द भी गिना जाए और दुःख भी गिना जाए, ऐसा नहीं है। आहाहा! ऐसा सुनने को कभी मिलता है। उसमें बाहर में अटककर पड़े। आहाहा! एक तो धन्धे के कारण निवृत्त नहीं होता। उसमें बाहर के ठाट। आहाहा! मार डाले जगत को।

आज समाचार-पत्र में बात आयी थी। एक राजा था न। राजा है, देश है। उसने विवाह किया, तो विवाह की पहली रात्रि में एक करोड़ खर्च किया, एक करोड़। पहली रात्रि में... आहाहा! उसे क्या होता होगा? आहाहा! पागल गहलता हुई। पागल एक रात में... विवाह के पहले दिन में करोड़ रुपये खर्च किये। धामधूम... आहाहा! अरे! प्रभु! क्या है? भाई!

तीन लोक का नाथ चैतन्यप्रकाशी नित्य विराजमान हैं। नित्य निरावरण हैं। **नित्य आनन्द जिसका एक लक्षण है...** नित्य आनन्द जिसका एक ही लक्षण है। उसमें कोई राग करना, राग छोड़ना... आहाहा! ऐसा उसके स्वरूप में है ही नहीं। आहाहा! **नित्य आनन्द जिसका एक लक्षण है ऐसा, निरंजन निज परमपारिणामिकभावस्वरूप...** निज परमपारिणामिकभाव। परमपारिणामिक क्यों लिया? पर्याय को भी पारिणामिकभाव कहा जाता है। पर्याय को। इसलिए यहाँ द्रव्य को लेना है। आहाहा!

निरंजन निज परमपारिणामिकभावस्वरूप कारणपरमात्मा... आहाहा! निरंजन नित्य आनन्द जिसका लक्षण है, ऐसा... आहाहा! **निरंजन निज परमपारिणामिकभाव...** अपना निज पारिणामिकभावस्वरूप। भगवान का पारिणामिकभाव भगवान के पास रह गया। आहाहा! **निरंजन निज परमपारिणामिकभावस्वरूप कारणपरमात्मा वह आत्मा है;...** उसे आत्मा कहा। आहाहा! इन नौ तत्त्व में उसे आत्मा कहा। आस्रव, पुण्य, पाप, बन्ध, वह तो नहीं परन्तु संवर, निर्जरा और मोक्ष भी नहीं क्योंकि वह तो पर्याय है। आहाहा! परमपारिणामिकभाव ज्ञायकभाव ज्ञान जानन.. जानन.. जानन.. जानन.. जानन.. जिसका स्वभाव, जिसका स्वभाव। जिसका स्वभाव है, वह त्रिकाल है। त्रिकाल जो स्वभाव है, वह **परमपारिणामिकभावस्वरूप कारणपरमात्मा, वह आत्मा है;...** उसे यहाँ आत्मा कहा गया है। आहाहा!

आत्मा किसी का भला कर दे और किसी से भला करावे या किसी से भला हो, ऐसा आत्मा नहीं है। आहाहा! यहाँ तो क्षायिकभाव भी आत्मा नहीं है, ऐसा कहा, वहाँ (दूसरी बात कहाँ रही)? आहाहा! आत्मा दूसरे का भला कर दे, भला कराओ, ऐसा करना, समन्वय करना, इकट्ठा करके एक-दूसरे को सहायता करना, मदद करना, तब यह सब शोभा देगा, तो मनुष्यपना शोभा देगा। मनुष्यपने को यह योग्य, मनुष्यपने की मेल

करके बराबर एकता यदि होवे तो मनुष्यपना शोभे, ऐसा कहते हैं लो। यहाँ कहते हैं कि ऐसा कारणपरमात्मा है, वह आत्मा शोभे। आहाहा! ऐसी जो दृष्टि करे, वह शोभे। आहाहा! एकान्त लगे... एकान्त लगे... बेचारे को लगे।

मुमुक्षु : ऐसा सुनने की उसमें योग्यता ही नहीं होती।

पूज्य गुरुदेवश्री : आहाहा! योग्यता नहीं होती। बात सच्ची है। अरे! प्रभु! ऐसा कहाँ है? आहाहा!

निज कारणपरमात्मा, वह आत्मा है। यह कैसा लिया? **त्रिकाल-निरावरण, नित्य आनन्द जिसका एक लक्षण है...** दो। **निरंजन निज परमपारिणामिकभावस्वरूप...** निरंजन निज परमपारिणामिकभावस्वरूप ऐसा **कारणपरमात्मा...** आहाहा! **वह आत्मा है;...** आहाहा! यह तो कहे, जीव किसे कहते हैं? कि दया पाले, हिले-चले, पर का हित करे, अहित करे, सुखी-दुःखी हो, वह जीव। आहाहा! यह तो इतना अधिक अन्तर पड़ा। यशपालजी! आहाहा! यह आत्मा किसे कहते हैं? त्रस किसे कहते हैं? जो हिले-चले वह त्रस। स्थावर किसे कहते हैं?—कि जो स्थिर रहे, वह स्थावर। आहाहा! यहाँ कहते हैं आत्मा किसे कहते हैं? स्थावर का या त्रस का या कोई भी (गतिरहित)... आहाहा! नित्य निरंजन निराकार एक नित्य लक्षण आनन्द जिसका एक ही लक्षण है, आनन्द जिसका एक लक्षण है, ऐसा **निरंजन निज...** परमात्मा **परमपारिणामिकभावस्वरूप...** परमपारिणामिकभावस्वरूप... आहाहा! ऐसा **कारणपरमात्मा वह आत्मा है;....** आहाहा!

उसके स्वरूप के श्रद्धान... उसके स्वरूप के श्रद्धान। इसमें नौ तत्त्व या वह कुछ लिया नहीं। आहाहा! एक भगवान निरंजन निराकार नित्य लक्षण, आनन्द लक्षण, परमपारिणामिकभावस्वरूप ऐसा कारण प्रभु, उसका-स्वरूप का श्रद्धान। **उसके स्वरूप के श्रद्धान...** अभी कारणपरमात्मा कौन है, यह सुना नहीं होगा। आहाहा! **उसके स्वरूप के श्रद्धान-ज्ञान-आचरण का रूप वह वास्तव में निश्चयरत्नत्रय है;...** आहाहा! ऐसा परमात्मस्वरूप कारणपरमात्मा, जिसमें अकेला निर्मल अनन्त गुण का पिण्ड... आहाहा! असंख्य प्रदेशी क्षेत्र, त्रिकाल निरावरण नित्य आनन्द जिसका एक लक्षण, वह **निरंजन निज परमपारिणामिकभावस्वरूप कारणपरमात्मा...** आहाहा! **वह आत्मा है; उसके स्वरूप के श्रद्धान...** उसके स्वरूप का श्रद्धान, वह समकित है। आहाहा! यहाँ तो अभी

देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा करो, वह समकित; नवतत्त्व की श्रद्धा करो, वह समकित—(ऐसा लोग कहते हैं)। आहाहा! भेदभाव है। अनेक प्रकार हैं।

उसके स्वरूप के श्रद्धान-ज्ञान-आचरण का रूप, वह वास्तव में निश्चयरत्नत्रय है;... आहाहा! वह सच्चा रत्नत्रय है। दर्शन-ज्ञान और चारित्र रत्नत्रय। रत्न, वह रत्नत्रय सच्चा है। पर्याय, हों! वह पर्याय है। द्रव्य की बात कठिन पड़ी है। वह **वास्तव में निश्चयरत्नत्रय है; इसप्रकार भगवान परमात्मा के सुख का अभिलाषी...** आहाहा! इस प्रकार जो कोई आत्मा भगवान परमात्मा के सुख का अभिलाषी। ऊपर कहा था न? कि नित्य आनन्द जिसका एक लक्षण है। इससे परमात्मा का आनन्द, उसका अभिलाषी। पर में कहीं सुख है, यह कल्पना छोड़कर। आहाहा! पाँच-पच्चीस लाख एक दिन में (मिलते हों) एक दिन में पच्चीस लाख की आमदनी (होवे तो) अन्दर से प्रसन्न-प्रसन्न हो जाए। अन्दर रोंगटे खड़े हो जाएँ। आहाहा! आज तो बहुत कमाया। यह... आये सट्टा में रसिकभाई। रसिकभाई का लड़का। लॉटरी। लॉटरी में पाँच लाख (मिले)। रसिकभाई आते हैं न? वाँचनकार। उनका छोटा लड़का। बड़ा रहता है। छोटा वहाँ रहता है। पाँच लाख। वहाँ सब कुटुम्ब-बुटुम्ब सब ऐसा कहे, आहाहा! पाँच लाख एक दिन में! धूल में (कुछ नहीं)। आहाहा! यहाँ एक हजार रुपये भेजे थे। पाँच लाख आये तो हजार रुपये भेजे। यहाँ ज्ञान खाते में। परन्तु पाँच लाख क्या, अरब रुपयें हों तो भी क्या? उसके साथ क्या सम्बन्ध है? आहाहा!

मुमुक्षु : वह त्याग ही नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : यहाँ त्यागी की तो बात चलती है। मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र का त्याग। यहाँ कुछ बाहर के त्याग की बात नहीं है। अमुक स्त्री, पुत्र का त्याग, धन्धे का त्याग, वह यहाँ नहीं। यहाँ तो मिथ्याश्रद्धा, मिथ्याज्ञान और मिथ्या आचरण का त्याग तथा सम्यग्श्रद्धा, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र का स्वीकार - आचरण। आहाहा! श्लोक तो बहुत अच्छा श्लोक आया। आहाहा!

इसप्रकार भगवान परमात्मा के सुख का अभिलाषी, ऐसा जो परम पुरुषार्थपरायण... परम पुरुषार्थपरायण। आहाहा! अपने कारणपरमात्मा की ओर के पुरुषार्थ में परायण। **परम पुरुषार्थपरायण...** भाषा जरा सूक्ष्म। अकेला पुरुषार्थपरायण

नहीं। **परम पुरुषार्थपरायण...** मुनि लेना है न? परम पुरुषार्थपरायण। आहाहा! आनन्द का नाथ अन्दर, प्रभु! अतीन्द्रिय आनन्द जिसका लक्षण एक ही है। एक ही लक्षण है, उसमें जो अन्दर रमता है। ऐसा जो **(परम तपोधन)...** यह **परम पुरुषार्थपरायण (परम तपोधन) शुद्धरत्नत्रयात्मक...** अभिलाषी। आहाहा! परमात्मा के सुख का अभिलाषी। निज परमात्मा के सुख का अभिलाषी। आहा!

ऐसा जो परम पुरुषार्थपरायण (परम तपोधन) शुद्धरत्नत्रयात्मक आत्मा को भाता है,... शुद्धरत्नत्रयस्वरूप, शुद्धरत्नत्रयस्वरूप - निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र उस शुद्धरत्नत्रयस्वरूप ऐसे आत्मा को भाता है, उसके द्वारा आत्मा को भाता है। आहाहा! **उस परम तपोधन को ही (शास्त्र में) निश्चयप्रतिक्रमणस्वरूप कहा है।** लो। शास्त्र में उसे निश्चयप्रतिक्रमण कहा है। उसे सच्चा प्रतिक्रमण है। बाकी सब खोटा प्रतिक्रमण है। आहाहा! ऐसी बात है। निश्चय... निश्चय... निश्चय, परन्तु व्यवहार है या नहीं? है न? व्यवहार बीच में होता है परन्तु वह बन्ध का कारण है। विकल्प आता है, व्यवहार होता है परन्तु वह मोक्ष का कारण नहीं है। आहाहा!

भगवान! आहाहा! **शुद्धरत्नत्रयात्मक आत्मा को भाता है,...** अन्दर भाता है। आत्मा की भावना अन्दर करता है। **उस परम तपोधन को ही (शास्त्र में) निश्चयप्रतिक्रमणस्वरूप कहा है।** आहाहा! यह सच्चा प्रतिक्रमण है। अब इसकी तो गन्ध की भी खबर नहीं होती और शाम-सवेरे प्रतिक्रमण करे, प्रतिक्रमण किया और यह... आहाहा! एक व्यक्ति कहता था। गारियाधार गये थे तब। गारियाधार में तो सब सगे-सम्बन्धी बहुत। कानजीस्वामी तो ऐसा कहते हैं कि यह... छोड़ दो। यह छोड़ दो। यह व्यवहार करना छोड़ दो। ऐसा कहते थे... प्रतिक्रमण करने मन्दिर जाते। आहाहा! छोड़ दो, छोड़ दो अर्थात्? स्वरूप में रमण करने से वह छूट जाता है, उसे छोड़ दो। उसे छोड़कर अशुभ में आना, यह यहाँ कहना है? शुभ छोड़कर अशुभ में आना, ऐसा कहना है? आहाहा! यह शुभभाव है, वह धर्म नहीं, मोक्ष का मार्ग नहीं, वह कल्याण का पन्थ नहीं, वह मार्ग ही नहीं, वह मार्ग ही नहीं। आहाहा! ऐसा कहना है। इसलिए (उसे) छोड़कर अशुभ में आना, ऐसा कहने का आशय नहीं है। विशेष कहेंगे.... गाथा कहेंगे...

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)